प्राक्मध्यकालीन जैन परिकर के खण्ड

सुमन्तभाई शाह

जैन शिल्प कला में तीर्थंकर एवम् यक्ष-यक्षिणियों की प्रतिमाओं के पीछे की विशेष सजावट को हम परिकर कहते हैं । प्राकृत भाषा में परिवार को ही परिकर कहते है । यह परिकर प्रतिष्ठित प्रतिमाओं को विशेष रूप में अर्थपूर्ण एवं आकर्षक बनाते हैं । परिकर कई प्रकार के होते हैं जैसे तीर्थकरों के चौबीसी परिकर, पंचतीर्थी परिकर, तीनतीर्थी परिकर एवं आकर्षक आभामण्डलों के साथ चामरधारी इन्द्रों, यक्ष-यक्षणियों, आकाश से उतरते हुये वाद्य एवं पूजन-सामग्री के साथ सजे हुए गंधर्व-किन्नर, पशु पक्षियों की कतारें, व्याल, हाथी एवम् बेलबूटों से सजे परिकर होते हैं वैसे ही यक्ष-यक्षिणियों के भी परिकर होते हैं ।

आत्मवल्लभ जैन स्मारक संग्रहालय में उपलब्ध परिकर प्रवि॰ क्र॰ ९४.३ (चित्र १) हमारा ध्यान विशेष रूप में आकर्षित करता है। संग्रहालय के अध्यक्ष एवं पुरातत्त्ववेत्ता प्रोफेसर एम॰ ए॰ ढाकी ने भी उसकी प्रशंसा करते हुए बताया कि यह परिकर प्रायः ६ठी ७वीं शती का हो सकता है, जिस पर विचार करना चाहिये ।

यह परिकर एवं अन्य शिल्प सामग्री हमें गुजरात के वड़ोदरा जिले में पादरा तहसील के वणच्छरा गाँव-वणच्छरा जैन तीर्थ से प्राप्त हुई है इसमें आचार्य श्री विजय नित्यानंदसूरीश्वर जी महाराज की प्रेरणा एवं प्रखर विद्वान् पुरातत्त्ववेत्ता श्री उमाकान्तभाई पी॰ शाह का मार्गदर्शन सहायक बना है । वणच्छरा तीर्थ के मंत्री ने बताया कि आज का प्रचलित नाम वणच्छरा तीर्थ पुरातनकाल में वच्छनगर था । हेमराज एवं वत्सराज दो भाई थे, जो व्यापार हेतु यहाँ आये थे, जिसका उल्लेख जैन साहित्य में पाया जाता है । उसके मुताबिक़ वत्सराज ने वच्छनगर का निर्माण किया था, जो व्यापार केन्द्र एवं बन्दरगाह था । आज भी यह ढाढड़ नदी के किनारे पर स्थित है, लेकिन समुद्र से काफ़ी दूर है । लगता है समय के बहाव ने समुद्र को इतना दूर कर दिया है । वत्सराज ने यहाँ बावन जिनालय का भी निर्माण किया था जो कि कालचक्र में लुप्त हो गया है । यहाँ के मंदिर का बार-बार जीर्णोद्धार होता रहा है एवं अवशेष मिलते रहे हैं । यह शिल्प सामग्री भी जीर्णोद्धार के समय उत्खनन कार्य से प्राप्त हुई है । लेकिन एक संशय होता है । क्योंकि भगवान् महावीर के विशाल जैन मंदिर का, ओसिया (राजस्थान) में निर्माण हुआ था वहाँ मिले शिल्पलेख के मुताबिक़ उसका निर्माण ८वीं शताब्दी में प्रतिहार राज वत्सराज ने किया था । हो सकता है वच्छनगर का निर्माण भी उसी ने किया हो ! लेकिन उपलब्ध परिकर ५वीं ६ठीं शताब्दी का है तो इसका मतलब इस स्थल पर पहले भी जैन मंदिरों का निर्माण होता रहा है ।

हल्के से गुलाबी संगमरमर के पत्थर में बने इस परिकर में दो स्तंभ, दो व्याल, दो हाथी, दो करबद्ध मानवाकृतियाँ, दो मकर (चित्र १-३) एवं एक सुंदर आभामण्डल है (चित्र ४) । इन तत्त्वों का विशेष अवलोकन करें : स्तंभ की कला एवं बनावट समय-समय पर बदलती रही है । संपूर्ण स्थापत्य कला में स्तंभ का विशेष महत्त्व है, विशेष पहचान है । परिकर के खंभे चौकोणाकार हैं तथा ऊपरी भाग चौकोण कमलाकार बना हुआ है। इसकी ऊपर उठी हुई एवं नीचे झुकी हुई समान्तर रेखाओं से कमल की पंखुडियाँ बनी है । यह लाक्षणिकता हमें ५वीं ६ठीं शताब्दी के दक्षिण भारत के गुफामंडपों में गोलाकार खंभों में भी देखने को मिलती है। अतः इन खंभों की बनावट को भी हम उसी काल से सम्बद्ध कह सकते हैं ।

व्याल एक कल्पित एवं सिंहनुमा प्राणी है । भारतीय मंदिरादि में इसका कई स्थानों पर उपयोग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१. परिकर [५ या ६ठी शती]

२. हाथी एवं मानव कृति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. सिंहनुमा प्राणी व्याल

४. आभामंडल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किया गया है । यह निर्माण को आकर्षक बनाता है । व्याल पीछे के एक या दो पैरों पर खडा बनाया जाता है । इस परिकर में व्याल को इतने महत्त्वपूर्ण रूप में बताना एक आश्चर्य है । साधारणतया परिकरों में चामरधारी इन्द्र, देवी-देवता, यक्ष-यक्षिणियों, काउस्सग एवं ध्यानमुद्रा में तीर्थंकर आदि बनाये जाते हैं लेकिन व्याल को परिकर में इतना महत्त्वपूर्ण स्थान मिलना इस परिकर को अति प्राचीन होने की गवाही देता है ।

इस परिकर में व्याल एक पैर पर खड़ा है एवम् दूसरा पैर हवा में उठाया है । शिल्प को गुच्छेदार पूँछ के सहारे हाथी के कंधों पर खड़ा किया है । व्याल को त्रिभंगी रूप में बनाया है । पैरों को बाजू में बनाया है । कमर को मरोड़ देकर छाती को एवं चेहरों को सामने से बनाया है । ऊपर के दोनों पैर, दोनों बाजुओं में फैलाये हैं । लगता है व्याल प्रभु की सेवा में उपस्थित होकर हर्ष मना रहा है । मुख पूरी तरह खुला है । इससे भी हास्य का आभास होता है । आँखों के भवों के साथ जुड़े हुए हिरण के सींग बने हैं । इसके बीच में एक कलगी बनी हैं । बाजू में सप्रमाण कान भी बनाये हैं । यह सब खुशी के प्रतीक लगते हैं ।

हाथी एवं मानवाकृतियाँ - व्याल ने दोनों बाजुओं में फैलाये हुये पैरों के पीछे दबी हुई करबद्ध मानवाकृतियाँ भक्तिभाव में लीन मालूम होती हैं । व्याल के पैर के नीचे सप्रमाण एवं सुंदर हाथी संपूर्ण तथा समर्पण की सौम्य भावना में हैं । यह अहिंसा एवं धैर्य का भी प्रतीक है । उसके ऊपर के हिस्से में दो हँसते हुये मकर बने हैं । मकर मगरमच्छनुमा कल्पित जीव है । भारतीय स्थापत्य एवं शिल्पकला में मकर तोरणों के साथ विशेष रूप में दिखाये जाते हैं । हँसते हुए यह मकर विरुद्ध दिशा में मुख किये हुये हैं । इसके पीछे बनी हुई आकृतियाँ, समुद्र में उठती हुई तरंगों जैसी दिखती हैं । ऐसा आभास होता है कि जैसे प्राणी समुद्र की लहरों में से बाहर आ रहा हो ।

आभामण्डल - ब्राह्मणीय बौद्ध एवं जैन शिल्प एवं स्थापत्य में आभामण्डल का सभी स्थानों में उपयोग हुआ है । वैसे भी विश्व की कोई भी दिव्य विभूति के मुखारविंद के पीछे आभामण्डल होता ही है ।

जैन शिल्प कला में तीर्थंकरों एवं देव-देवियों के मुखारविंद के पीछे अनेक प्रकार के आभामण्डल दिखाये गये हैं । वैसे ही इस परिकर में भी दोनों मकरों के बीच में अति विशेष एवं सुंदर आभामण्डल बना है । यह भी समुद्र में से उठी तरंगों से रूप में लड़ीबद्ध आकृतियाँ बनी हैं जो आभामण्डल के नीचे के हिस्से से उभरकर ऊपर की ओर उठती हुई संतुलित एवं सप्रमाण तरीके से ऊपर के हिस्से के बीच में मध्य बिंदु से मिल जाती है । ये विशेष आकृतियाँ दूसरे आभामण्डल में देखने में नहीं आती हैं । आभामण्डल के मध्य में वर्तुल है उसके मध्य में खुली पंखुडियों वाला कमल बना है । कमल के मध्य में एक और वर्तुल बना है एवं उसके मध्य में भी छोटा वर्तुल बना है । उसके बाहर रेखायें बनी हैं जैसे सूर्य से निकली शत-शत किरणें हों । यह सूर्य जैसा भी लगता है । आभामण्डल की विशेषतायें भी परिकर को अति प्राचीन बता रही हैं ।

यह परिकर सीमित एवं सादे तत्त्वों से बना हुआ है लेकिन इसका शिल्पांकन सशक्त एवं सिद्धहस्त शिल्पकारों के हाथों बना हुआ है । परिकर शिल्पकला के रूप में भी उल्लेखनीय है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org